चतुर्थ अध्याय

घरौन्दा नाटक का कथ्य

चतुर्थ अध्याय

घरौन्दा नाटक का कथ्य

प्रस्तावना --

डॉ.शंकर शेष का यह नाटक हिन्दी नाटय सृष्टि की एक अनमोल निधी मानी जाती है। वर्तमान जीवन का यथार्थ चित्रण करने वाला यह नाटक हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। डॉ.शंकर शेष की सूक्ष्म निरीक्षणवृत्ति और सशक्त लेखन के साथ प्रभावशाली व्यक्तित्व के कारण नाटय साहित्य में उनका विशिष्ट स्थान बन पाया है। आधुनिक संवेदना का अहसास, जीवन का यथार्थ बोध और नवीन मूल्यों का सशक्त आग्रह उनके नाटयसाहित्य की विशेषता है।

डॉ.प्रभाकर माचवे ने अपने `मकान` निबन्ध में `मकान` के बारे में बडा मार्मिक वर्णन किया है --

` मकानम् लामकां बाशद,निशानम् बेनिशा बाशद`

(सुफी कवि रूमी)

खरगोश के सींग ? मिल सकते हैं। बालू से तेल ? मिल सकता है। हिन्दी साप्ताहिक में प्रेस की अशुध्दियों का अभाव ? मिल सकता है। पूँजीपति जो समाजवादी हो ? मिल सकता।` सुनते हैं नेपोलियन के शब्दकोश में असम्भव शब्द नहीं था, परन्तु नेपोलियन यदि १९४७-४८ के भारत में होता और बच्चू को अगर कहीं शरणार्थी बनना पडता तो... ।`[१]

मध्यवर्ग समाज की रीढ है। रूढिवादिता की लीक पीटने में सबसे आगे होने के बावजूद परम्परित मूल्यों एवं मान्यताओं के विरोध में क्रान्ति का शंख

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - मकान निबंधायन-स-ब्रजनारायणसिंह - पृ.४८-५०।

फूंकने में भी यही वर्ग अग्रणी रहता है। मध्यवर्ग की इसी अन्तविरोधी प्रवृत्ति का उद्घाटन डॉ.शेष ने अपने नाटक 'घरौन्दा' में किया है। 'हमारी समस्या - गरीबी नहीं .... मकान हमारी समस्या नहीं है हमारी समस्या है मध्यवर्गीय नैतिकता का बोझ।'[२] सफेद कपडे पहनने के बावजूद उस समाज के नियामकों को हम स्वीकार नहीं। मजदूरों से कम तनख्वाह पाकर भी मजदूर कहलाने से नाक भौं-सिकोडने वाले हम ... त्रिशंकु की सन्तान हैं ... त्रिशंकु की सन्तान।'[३] नाटक का शीर्षक मध्यवर्गीय समाज के जीवन का स्वप्न है जिसे देखने के लिए उसकी आँखों के इन्द्रधनुषी रंग फीके पडने लगते हैं -- सारा जीवन भी छोटा दिखाई देता है। मध्यवर्गीय व्यक्ति के पास सपनीले स्वच्छन्द आकाश में उडने के लिए सप्तरंगी पंख तो हैं लेकिन कठोर जमीन से टकरा टकरा कर टूटने के लिए है। उसकी नियति है एक छोटा-सा घरौन्दा जिसकी कल्पना में उसकी जिन्दगी ही नष्ट हो जाती है।

प्रस्तुत नाटक के कथ्य का यहाँ सविस्तर विवेचन किया जाता है।

(१) घर की समस्या --

आज हमारे लिए महानगरीय जिंदगी में घर की समस्या हमारे जीवन की अहम समस्या बन गई है। 'घरौन्दा' नाटक बंबई जैसे महानगर में स्थित इसी समस्या को उठाता है। मध्यवर्गीय के घर के स्वप्न की कथा को लेकर डॉ.शंकर शेष ने घरौन्दा नाटक लिखा है। 'घरौन्दा' का कथानक छाया और सुदीप के जीवन संघर्ष का कथानक है। बंबई जैसे महानगरीय जीवन की जटिलताओं ने वहाँ रहनेवाले व्यक्तियों के जीवन मूल्यों एवं उनकी दृष्टि को कितना बदला दिया है,इस बात का सच्चा चित्रण कराने में डॉ.शंकर शेष का यह नाटक सक्षम रहा है। बंबई या बंबई जैसे महानगरीय जीवन में घर की समस्या दिन-ब-दिन बढती ही जा रही है। नाटककार डॉ.शंकर शेष ने घर के संबंध में अनेक तथ्यों को निरूपित करते हुए घर तथा घरों के मालिकों से सम्बन्धित अजीबोगरीब किस्सों का जिक्र करते हुए नाटक

---

२ डॉ.शंकर शेष - घरौन्दा - पृ.१८।

३ वही पृ.१९।

का सृजन किया है। घर की तलाश करते समय छाया और सुदीप के सामने आनेवाली विभिन्न बाधाओं को बडे यथार्थ ढंग से प्रस्तुत किया है। यह नाटक आधुनिक जीवन के एक पहलू 'घर' की समस्या की अभिव्यक्ति प्रस्तुत करता है।' आदमी की जिन्दगी से अधिक मूल्यवान चीनी, चावल, कपास, आलसी या जूट की जिन्दगी है। आदमी बिना मकान फुटपाथ पर पडा पडा ठिठुर रहा है और चोरी से छिपाया हुआ अनाज या अन्य माल मजे से खुर्राटे भर रहा है। हमारी सभ्यता इस स्तर पर आ चुकी है।"[४] आज महानगर में घरवाली मिलना आसान है किन्तु घर मिलना बहुत कठिन है इसका अहसास हमें प्रस्तुत नाटक में होता है। घर की समस्या इस नाटक में प्रधान रूप से उभरी है। नाटक का प्रमुख पात्र सुदीप के शब्दों में" हमारा बच्चा माँ के अभाव में नहीं चार दीवारों और एक छत के अभाव में कभी अस्तित्व में नहीं आएगा।"[५]

(२) प्रेम संघर्ष और करुणा --

नाटक का कथानक सीधा, सरल और आम आदमी की जिन्दगी को सम्प्रेषित करनेवाला है। नाटक पढते या देखते समय पाठक को जीवन में घटित घटनाओं से नाटक की घटनाओं का साम्य प्रतीत होता है। नाटक का चरम सिमा पर पहुँच कर छाया का मोदी को छोडने का निर्णय पाठकों को सिहरा देता है। मोदी का अपने अधिकारों को जतलाना स्वाभाविकता लिए है। लेकिन सबसे ऊपर है छाया का कथन जिसे अपने प्रिय का संपूर्ण स्नेह और ममत्व चाहिए, जिसमें कोई शंका न हो, संदेह न हो, यही पाठकों पर अमिट प्रभाव डालता है। हम कितने ही भौतिकतावादी, आधुनिकतावादी, पश्चिमी सभ्यता के रंग में रंग जाएँ लेकिन अपनी सभ्यता और संस्कृति के प्रति एक विवश स्वीकृति का भाव तो है ही। जीवन संघर्ष का जीता-जागता अंकन कर नाटककारने कौतूहलपूर्ण वातावरण बनाए रखा है। हर समय पाठक, प्रेक्षक भी नायक - नायिका के साथ जीवन संघर्षों के थपेडे खाता रहता है। उनके दु:ख में दुखी और सुख में सुखी होता है। उनकी आकांक्षा को कियान्वित देखना चाहता है। कथानक में विभिन्न भावों का संगम है। सुदीप और छाया की

४ डॉ. प्रभाकर माचवे : मकान - निबंधायन सं - ब्रजनारायणसिंह-पृ. ५० ।
५ डॉ. शंकर शेष : घरौन्दा - पृ. १९ ।

कथा प्रेम और संघर्ष की फुहारें हैं। संघर्षों से पलायन आम मध्यवर्गीय का स्वभाव है। लेकिन डॉ.शेष सुदीप और छाया को प्रेरक शक्ति के रूप में उभारते हैं। एक बिन्दु पर आकर वे निर्णय लेने में सकोंच न करने की प्रेरणा देकर चीवट जिजी - - विषा का दर्शन प्रतिपादीत करते हैं। संस्कारों पर टिके रहने की वकालत करता है यह नाटक और सबसे अहमभाव करुणा का है जिससे नाटक करुणामय हो उठा है। बिल्डर का पैसा खा जाना,गुहा द्वारा रोग की पटरी पर आत्महत्या करना, उसकी पत्नी के पत्र का एक-एक शब्द मानो छाया की आत्मा को ही नहीं पाठक प्रेक्षाक की आत्मा के कोमल भाव-तन्तुओं को झकझोर देता है" किसी पिघले सीसे की उबलती बूंद की तरह मेरी आत्मा पर पडा रहा है। फफोले उठ आए हैं मेरी आत्मा पर ....।"[६] गोविन्द को पैसे देने के उपरान्त छाया का यह कहना... " मेरी किस्मत में शायद दीवार से ही सिर टकराना लिखा है पर तू ... अभी तेरे पंखों में ताकत है ... तेरे सामने आकाश है, उड... जिस ऊचाई तक उड सके.. उड... उस आकाश की ओर ऊन ऊचाइयों की ओर जहाँ हमारी कल्पना नहीं पहुँचती।"[७] और सुदीप का चीख कर कहना...' जाओ छीन,लाओ उससे चेक...।"[८] प्रेक्षाक ,पाठक के हृदय में करूणा के भाव निर्माण करता है। नाटक के दूसरे अंक में भी छाया सुदीप और मोदी तीनों को ही कारुणिक स्थितियोंमें दिखा कर नाटककारने आधोपान्त इस भाव की सृष्टि की है।

(३) नैतिकता का बोझ --

' घरौन्दा' की छाया पेट काटकर अपने घरौन्दे को स्वप्न पूर्ति में प्रयत्न- - शील है पर बार-बार आनेवाली आर्थिक मुसीबतों से रेत के घरौन्दे की तरह वह स्वप्न ढह जाता है। सुदीप उसे दिल के मरीज मि.मोदी से विवाह कर लेने की सलाह देता है लेकिन छाया का मन नीति विरुध्द काम करने को तैयार नहीं होता

---

६ डॉ.शंकर शेष - घरौन्दा - पृ.३६।

७ वही पृ.४२।

८ वही पृ.४५।

इसलिए सुदीप कहता है हमारी समस्या है गरीबी...शायद गरीबी भी नहीं । हमारी समस्या है मध्यवर्गीय नैतिकता का बोझ ।"[९] आज मध्यवर्ग इसी खींचातानी में अटक पडा है कि एक ओर आर्थिक समस्या तो दूसरी ओर नैतिकता का बोझ ।

(४) मध्यम वर्गीय जीवन की समस्या --

` घरौन्दा` के छाया और सुदीप महानगरीय मध्यवर्ग के प्रतिनिधि हैं । वे घर न पाने के कारण घर नहीं बसा पाते । वे बहुत बार प्रयास भी करते हैं । पहले छाया और सुदीप अपनी जितनी भी चीजे थी वे बेचकर और कुछ इधर उधर से रुपये इकट्ठा करते हैं। कुलमिलाकर आठ हजार रुपये वे गुहा के कहने पर बिल्डर को देते हैं । लेकिन वह बिल्डर पैसे लेकर भाग जाता है । दूसरी बार छाया का भाई गोविन्द अमरीका - यात्रा के लिए छाया को जमा की हुई सारी की सारी पूँजी ले जाता है । तीसरी बार मकान मालिक सुदीप के दिये हुए पैसे अपनी बेटी के दहेज में लगाता है और बाकी रही रक्कम न दे सकने के कारण सुदीप को मकान भी नहीं मिलता है । इसी तरह ये प्रेमी हर समय हार ही स्वीकारते रहते हैं । जब वे इसी तरह असफल होते रहते हैं तब सुदीप अपनी प्रेमिका छाया को बूढे और दिल के बीमार मि.मोदी से विवाह करने को बाध्य करता है,क्योंकि मोदी की मृत्यु के बाद वे सारी संपत्ति के मालिक बनेंगे और सभी सुविधाएँ प्राप्त होंगी । इसप्रकार मध्यवर्गीय व्यक्ति अधिक अर्थार्जन के लिए नीति धर्म को तोडने में भी संकोच नहीं करता । इसी संघर्ष के कारण सुदीप को अंत में आत्महत्या करनी पडती है ।

(५) स्त्री-पुरुष संबंध --

` घरौन्दा` इस नाटक की कथा छाया और सुदीप के जीवन संघर्ष की कथा है । ये दोनों निम्नमध्यवर्ग के प्रेमी हैं । उनकी महानगरीय जिंदगी में घर की समस्या उनके लिए जीवन की समस्या बन गई है । अपना घर नहीं है इसलिए दोनों चाहकर और निर्णय लेकर भी शादी नहीं कर सकते । दोनों के मिलन में घरौन्दे की समस्या

---

९ डॉ.शंकर शेष - घरौन्दा - पृ.१८ ।

दीवार बनकर खडी है । जैसे सुदीप कहता है कि हमारा बच्चा माँ के अभाव में नहीं चार दीवारों और एक छत के अभाव में कभी अस्तित्व में नहीं आएगा ।" [१०] केवल घरौन्दे के लिए सुदीप अपनी प्रेयसी छाया को धनी मि.मोदी से शादीकर लेने का प्रस्ताव रखता है । प्रेमी-प्रेमिका का पतिपत्नी के रूप में जीना संभव नहीं होता । आर्थिक परिस्थिति तथा सामाजिक व्यवस्था के कारण स्त्री-पुरुष संबंध बनने के लालच में बिगड जाता है ।

(६) महानगरीय जीवन --

आज को यंत्रवत बनी, संवेदन शून्य और व्यस्त महानगरीय जिंदगी में शांति दिलानेवाला एक घरौन्दा भी मनुष्य को नहीं मिल रहा है । महानगरीय जिंदगी में मनचाहा साथी मिल जाएगा परंतु घर नहीं मिलेगा । फ्लॅट की कीमते दिन-ब-दिन बढती ही जा रही हैं और क्लर्क श्रेणी के जीव को घरौन्दे का टूटा सपना ही देखना पडता है । यही गृहनिर्माण की समस्या महानगरीय जीवन में आज भयानक रूप धारण किये बैठी है ।

बंबई महानगर के मध्यवर्गीय जीवन और उनकी समस्याओं का पाठक, प्रेक्षकों से सीधे साक्षात्कार नाटककार ने यहाँ कराया है । जीवन की कठिनता ने किस प्रकार उनकी सोच - समझ को कुंठित कर दिया है । उसकी सोचने की दृष्टि केवल बॉस के ` वैरी गुड ` कहने अथवा ` घर वाली का वास्ते इम्पोर्टेड साडी खरीदने ।" [११] तक ही सीमित है । वहाँ के लोग किस प्रकार एक कमरे में जीवन कठिनता को भोग रहे हैं, सोचकर दिमाग जड हो जाता है । युग की भ्रष्टता और पंगु होते जा रहे निम्नमध्यवर्गीय व्यक्ति के महानगरीय जीवन को परिभाषित करते हुए नाटककार उनके शिखर ब्रह्म को उभारता है --" जब देखो साला, चावल, लोकल की सीट, औरत का मायके जाना , चीनी भाव...इसके आगे सोचने की ताकत ही नहीं तुम लोगों में इसीलिए क्लर्क हो क्लर्क ... अरे क्लर्क योनि के क्षुद्र जीवो ।" [१२] इस वर्ग की प्रमुख समस्या है नैतिकता और संस्कार जिसे नाटककार की लेखनी ने सुक्ष्म रूप से अंकित किया है ।

---

११ डॉ.शंकर शेष : घरौन्दा - पृ.२३ ।

१२ वही पृ.२३ ।

घरौन्दा कोई बच्चों का गीली रेत में बनाया हुआ घर नहीं है । जिसके सृजन में भी सुख और अपने ही हाथ से तोड देने में भी आनन्द होता है । यद्यपि इस नाटक के आरंभ में खेल-खेल में ही घरौन्दे की कल्पना के साथ लडने और जूझने का संकल्प भी हो जाता है। बाज चील का घरौन्दा छिन्न-भिन्न करने पर मायूसी नहीं उभरती अपितु करुणा उपजती है । दो प्राणी फिर से उन तिनकों को समेटने-संवारने में जी-जान लगा देते हैं लेकिन परिणाम वही ढाक के तीन पात । अन्त में घरौन्दे की कल्पना को साकार देखने के लिए षड्यन्त्र और पाप,नैतिकता-अनैतिकता सभी की सीमाएँ लाँघने वाला मध्यवर्गीय सुदीप नियती के हाथों नचैया बनने को मजबूर हो जाता है । कितनी क्रूर नियति है मध्यवर्गीय व्यक्ति को,जिसको जीने में सुदीप अपनी आत्मा तक मारने को तैयार हो जाता ? मध्यवर्गीय मानव के संघर्ष की परिभाषा शायद यही है जिसे नाटककार हर आयाम से प्रस्तुत करने को संकल्पित दिखाई देता है । मध्यवर्ग के इस सार्वकालिक द्वन्द्व के मूल में यम रूपे अर्थ - सत्ता का दंश है । हमें यह कहने में कोई संकोच नहीं कि आधुनिक युग में आकर प्रत्येक वर्ग में चाहे वह निम्न वर्ग हो, निम्नमध्यवर्ग हो,उच्चमध्यवर्ग हो या उच्चवर्ग हो - हमारे सामाजिक संबंध ही नहीं हमारी सूक्ष्म और कोमल भावनाएँ भी बदल गयी हैं । चुपके से उन सबका अर्थ करण हो गया है । प्रेम,दया,सहानुभूति,सम्मान,देशभक्ति और प्रार्थना तक में अर्थतन्त्र घुस गया है । धन तो बाद की चीज थी,पहले तन और मन दिया जाता था । लेकिन अब हम तन-मन की जगह धन देते है - प्रेम करेंगे,तो उपहार देंगे,दया करेंगे तो पैसा फेकेंगे,सहानुभूति जतानी होगी तो आर्थिक सहायता देगें,सम्मान देना-पाना होगा तो पैसा खर्च करेंगे,देशभक्ति दिखाने के लिए हथियार लेकर लडने नहीं जायेंगे अपनी जगह अपना काम सही ढंग से नहीं करेंगे,रिश्वत या चोरी से कमाया हुआ धन डिफेंस में दे देंगे ।"[१३] गम्भीरता से सोचा जाये तो इस सत्य को नकारा नहीं जा सकता कि आज अर्थ हमारी सामाजिक व्यवस्था की तनमन आत्मा की इकाई बन चुका है ।

महानगरीय जीवन तो अर्थ के अभाव में हीन-दीन,क्षीण है । आज पैसे ने ही

---

१३ डॉ.रमेश उपाध्याय : नवनीत : अर्थतन्त्र कहानी - पृ.७१ ।

परमेश्वर का रूप ले लिया है। महानगर में तो आज पैसा साधन नहीं,साध्य है। वर्तमान सभ्यता - संस्कृति पैसे को छीना झापटी का संस्कारण है। शिष्टाचार,मान सम्मान ,प्रतिष्ठा,विनम्रता,मधुर सम्भाषण,भोगविलास आदि अर्थ-शुष्कता को कम करने का चन्दनी लेप है। परोपकार और सिम्पैथी आत्मा की आवाज पर नहीं की जा सकती बल्कि किसी खास वजह से की जाती है। घोर स्वार्थ अर्थ तन्त्र से संक्रमित होती मध्यवर्गीय चेतना की विभिषिका है। छोटे से छोटा कार्य भी आज प्रतिदान की घेरे-बन्दी में कैद है।

महानगर में सब के सामने आम बढाने का लक्ष्य होता है ताकि जीवन को समृध्द बना सके। सुदीप,छाया,मोदी तथा अन्य पात्र प्रस्तुत नाटक के मात्र पात्र नहीं है। ये पात्र युग के व्यापक सत्य का प्रतिनिधित्व करते हैं। अर्थ - तन्त्र की लपेट में लिपटे सुदीप-छाया की घुटन वस्तुत: आज के प्रत्येक महानगरीय युवा-मानस की है,परिवार की है,समाज की है। समाज के इस व्यापक सत्य को शेष ने बडी सहजता से चिन्तमयी भाषा में साक्षात कर दिया है।यह स्थिति काल और सीमाओं से परे है।यह शौकातिका बंबई महानगर की नहीं है अपितु आज प्रत्येक मध्यवर्गीय का मन बंबई महानगर बना हुआ है जिसकी चक्करदार कंकरीट भवरों में डूबता-उतराता संक्रमित भाग्य लेखा एक छोटे से,प्यारे से ` घरौन्दे` का आस में विवश नियति बनकर मध्यवर्गीय के व्यक्तित्व का हिस्सा बन गया है।

(७) धन की प्राप्ति की तलाश --

मि.मोदी छाया को पत्नी के रूप में धन से ही खरीदते हैं और यातनाओं से बाज आया सुदीप भी छाया को मोदी का प्रस्ताव मानने के लिए बाध्य करता है। इस धन के कारण मध्यवर्गीय संस्कारों को माननेवाली छाया अंत में मिसेस मोदी बनकर रह जाती है। मेहनत ईमानदारी जैसे मार्ग इस` अर्थ केन्द्र` में बेकार हो गये हैं। अब खुशामद,ईमान का नीलाम,जैसे वाममार्ग राजमार्ग बन गए हैं।

` एक और द्रोणाचार्य` का गुरू द्रोण भी धन के अभाव के कारण कौरवों जैसे असत्य-अधर्मी लोगों का पक्ष लेता है। सुदीप इसी प्रतिष्ठा को प्राप्त करने की कोशिश में अपनी प्रेयसी छाया को खो बैठता है। इसी प्रतिष्ठा को प्राप्त करने के लिए ही वह छाया के सामने मोदी के साथ विवाह करने का प्रस्ताव रखता है

क्योंकि मोदी दिल का मरीज है और उसे दो बार दौरे भी आ चुके हैं,उसका हर एक आनेवाला पल मृत्यु का पल बन सकता था । इसीलिए ही सुदीप छाया से मोदी के साथ विवाह करने को कहता है । मोदी की मृत्यु होने के बाद यही धन वह हासिल करना चाहता है । उसको धन का प्राप्ति की तलाश है । उसकी यह तलाश नाटककार ने प्रतिनिधिक रूप में चित्रित की है ।

(८) मध्यवर्गीय घर हीनों की बलवत्तर महत्वाकांक्षा --

अधिकांश मध्यवर्गीय घरहीनों की बलवत्तर महत्वाकांक्षा होती है अपना घर । ' अपना एक छोटासा घर होगा । केवल अपना एक छोटा-सा घोंसला । अपनी सता की एक छत,एक कमरा हुआ तो क्या हुआ । उसे इस तरह से सजाऊँगी कि तुम भी क्या कहोगे । कमरे में एक तरफ होगी बैठक । हमारा सोफा । पास ही होगा एक छोटा-सा शो केस । उसमें होंगी तरह तरह की गुड्यिाँ । शो-केस पर होगा पीतल का एक बडा फ्लावर पॉट । उसमें होगें निशिगंध के फूल । दीवारों का रंग हल्का नीला कराना । आकाश की तरह । परदे भी उससे मिलते जुलते.... ।' [१४] यह 'घरौन्दा' छाया और सुदीप का यानी असल में हमारे समाज के हर मध्यवर्गीय आदमी का ही 'घरौन्दा' है । इसे बनाने के लिए वह कष्ट उठाता है,यातनाओं के जंगलो से गुजरता है,भूखा रहता है,सर पर कर्ज को बोझ चढाता है,पसीना बहाता है,एक-एकबूँद खून जामाता है । पाई-पाई बचाकर कौडी कौडी जमाकर,अपना पेट काट-काट कर उसे बनाने की स्वप्न पूर्ति में वह लगा रहता है । परन्तु क्या उसका 'घरौन्दा' बनाने का स्वप्न पूरा होता है ? क्योंकि समुद्र की निष्ठुर लहरों की तरह अदृश्य नियति हमारे सपनों के 'घरौन्दे' को बच्चों का रेती का 'घरौन्दा' समझकर उसे बहा देती है । छाया और सुदीप की प्रेम कहानी में 'घरौन्दे' बनाने का सुन्दर सपना है। उसकी पूर्ति के लिए उन्हें क्या कुछ नहीं करना पडता । वे अनेक कष्टों को उठाते हैं । एक-दूसरों पर प्रेम करते हुए तथा शादी की उमर होकर भी वे शादी नहीं करते ।

---

१४ डॉ.प्रकाश जाधव - डॉ.शंकर शेष का नाटक साहित्य - पृ.७२ ।

एक समय पाव तथा बडा खाकर और दूसरे समय केवल राईस प्लेट खाकर दोनों अपनी जिन्दगी गुजारने लगते हैं। वर्षों की अवधि के बाद भी उनका स्वप्न स्वप्न ही रह जाता है। क्योंकि पहली बार जमा पैसे बिल्डर हजम करता है। दूसरी बार पास बुक में जमा रकम छाया का भाई गोविन्द अमेरिका जाते वक्त ले जाता है तो तीसरी बार मकान मालिक अपनी बेटी के दहेज के लिए आठ हजार खा जाता है। आखिर हारकर छाया चाहती है --" छत केवल एक छत। मुझे चाहिए केवल एक छत। धूप से बचने के लिए, बरसात की मार से बचने के लिए।" [१५] आगे सुदीप से उसका कहना है --" मुझे चाहिए केवल एक छाया.... जहाँ निर्भय होकर मैं तुम्हारी बाहों में समा सकूँ। जहाँ की हवा मेरी साँस बन सके। केवल एक टूकडा फर्श एक टूकडा आकाश।" [१६]

परन्तु सुदीप की पुरूषार्थ के बदले एक षड्यन्त्र का सहारा लेने की कोशिश ही छाया को उससे अलग कर देती है। दोनों में एक गहरा अन्तराल पैदा होता है। इसी अन्तराल के कारण `घरौन्दा` बनाने का उन दोनों का सुन्दर स्वप्न बालू के घर की तरह ढह जाता है। सुदीप को मानसिक नपुंसकता का दण्ड मिलता है। मनुष्य अपनी जिन्दगी में कभी कभी बच्चों जैसी हरकते करता है और उसमें वह स्वयं फँस जाता है, जैसे सुदीप।" क्योंकि जिन प्रश्नोंपर आमने सामने आकर लडाई करना जरूरी है, जिनके फैसले सडकों पर किये जाने चाहिए उन्हें व्यक्तिगत साजिशों से नहीं सुलझाया जा सकता।" [१७]

छाया और सुदीप के सभी रास्ते एकदम खत्म होते हैं। एक-एक बूँद खून जलाकर भी उन्हें अपने स्वप्न का मकान नहीं मिला। कोशिश पर कोशिश करने के बाद भी कभी किसी ने अपने अलावा छाया और सुदीप के सुन्दर `घरौन्दे` के सुन्दर स्वप्नों की नहीं सोची। इस युग में हर आदमी अपने स्वार्थ के लिए दूसरे के खिलाफ षड्यन्त्र रचता है। वह यह नहीं सोचता कि इस षड्यन्त्र से

---

१५ डॉ. शंकर शेष - घरौन्दा - पृ.३५।
१६ वही पृ.३६।
१७ वही पृ.८७।

दूसरा टूट जाएगा या उसे अपनी छाती पर रेल के पहिए झेलने पड़ेंगे । यह तो दूसरों के सुन्दर स्वप्नों को गठरी में बाँध कर चला जाता है,पर टूटते हैं,सुन्दर सुन्दर स्वप्नों को संजोने वाले ही । मध्यवर्गीय परिवार के सदस्यों की समस्या है गरीबी के रेगिस्तान में महत्वाकांक्षाओं का कमल खिलाने की जिद ।"[१८] और इस जिद के लिए ही वह रेल के पहिए के नीचे पाट भी जाता है तो भी पर्वा नहीं करता । गरीबी अपने आपमें एक बीमारी है,एक 'शिकनेस' है । यह किसी अच्छी चीज को पनपने ही नहीं देती । रोटी और कपडा जुटाने में ही पूरी ताकत चूस लेती है । उन शक्तियों का आभास तक नहीं होने देती जो किसी के भीतर होती हैं ।

(९) भारतीय स्त्री के संस्कारों का चित्रण --

डॉ.शंकर शेष ने 'घरौन्दा' नाटक में भारतीय स्त्री के संस्कारों के महत्व का प्रतिपादन किया है -- छाया के माध्यम से । सुदीप के शॉर्टकट के साजिश में शामिल होकर उसके कहने पर ही छाया अपने घरौन्दे की मोहक कल्पना को साकार करने के लिए बॉस मोदी से विवाह कर बैठती है । पर विवाह के पश्चात ही उस में स्थित भारतीय नारी के संस्कार अवचेतन से चेतन में बदल जाते हैं और उसे आत्ममंथन के लिए बाध्य करते हैं । इसलिए सुदीप से हाथ छुडाकर वह उससे प्रश्न कर बैठती है --" क्या स्पर्श के भी संस्कार होते हैं ,सुदीप ?"[१९]

(१०) अर्थातंत्र में जकडा नियतिवादी दर्शन --

अर्थ ने मध्यवर्गीय व्यक्ति की रीढ को सबसे ज्यादा तोडा है । अर्थ-तन्त्र की आडि-तिरछी अनमेल रेखाओं ने उसे न केवल कुण्ठित हताश किया है,बल्कि उसकी दृष्टि,साधना,दर्शन,उद्देश्य,सिध्दि,संबंध,भावना,प्यार,सहानुभूति,दया, ममता सभी कुछ अर्थमय हो गया है । इसी समस्या को केन्द्र में रखकर डॉ.शंकर शेष ने विभिन्न समस्याओंपर प्रकाश डाला है । 'घरौन्दा' बने कैसे ? अर्थ तन्त्र में जकडा घरौन्दा - जिसका नक्शा विवश नियतिवादी दर्शन बन जाता है,

१८ डॉ.शंकर शेष - घरौन्दा - पृ.२१ ।

१९ वही पृ.५५ ।

इसलिए एक ही कमरे में कई कई लोग रहने को अभिशप्त हैं। जैसे सुदीप और उसके दोस्त। किसी एक के भी प्यारे मेहमानों के आनेपर अन्य दोस्तों का कमरे से बाहर रहना उनकी इच्छा नहीं तो विवशता है। नाटककार इन्हीं रोजमर्रा की साधारणसी बातों से मकान प्राप्ति के गंभीर संकट और मध्यवर्गीय समाज की विडम्बित नियति को मर्मस्पर्शी ढंग से उभारता है। महानगर के एक कमरे में रहने वाले लोगों की जीवन यातना असह्य है। मन वितृष्णा से भर जाता है। डॉ.शेष ने महानगरीय जीवन की इस घुटनशील समस्या को बडे मानवीय और यथार्थ धरातल पर प्रस्तुत किया है -- " तीन पीढियाँ कट गईं,उस सडी-सी-चाल में... उस भीड में। उस नरक में। तुम नहीं जानते सुदीप,जब कभी रात को नींद खुल जाती है तो मेरा शराबी भाई-मेरी मामी के साथ... उफ..वह छीना झपटी... रोंगटे खडे हो जाते हैं मेरे।"[20] नाटक की व्यजंना उसका शीर्षक ही कर देता है। नाटककार समस्या के प्रति इतना गंभीर है कि स्थान स्थान पर संवाद के माध्यम से अपने उद्देश्य को रेखांकित करता जाता है जिससे समस्या की उत्कट भयावहता का पता चलता है। नाटक के प्रथम दृश्य में ही सुदीप के टेलीफोन से मकान की समस्या स्पष्ट होती है -- " आज रात देरी से लॉज लौटू ? क्यों ? ...फिर वही ... चोपडा उसे ला रहा है। लेकिन गुहा आय हू एग्री ... हर एक को सेक्स चाहिए...कहा से बोल रहे हो ? बोरिवली से ? वहो वहो मकान का चक्कर ? बढे रहो डियर।"[21] नाटककार पाठक,प्रेक्षाक को किसी भी स्थिति में इस समस्या के इर्द गिर्द ही रखता है। इसका विशेष कारण है,लेखक नहीं चाहता कि पाठक नाटक की कथा को महत्व देने लगे। इसलिए वे बडे सटीकनफीस तरीके से छोटे छोटे संवादों से समस्यापर प्रकाश डालते हैं।..." घर हो तो कोई इंतजार करे।"[22] " एक कमरे का घर... यह लोग... हर आदमी चाहता है दूसरा बाहर रहे।"[23] निम्नमध्यवर्गीय,मध्यवर्गीय व्यक्ति की विवश विडम्बना देखिए कितनी मार्मिक है जहाँ उसकी प्राकृतिक

---

२० डॉ.विनय : शंकर शेष रचनावली - पृ.३२७-२८।
२१ " - वही - पृ.३२३।
२२ डॉ.शंकर शेष : घरौन्दा - पृ.१४।
२३ वही पृ.१५।

आवश्यक्ताएँ भी एक अलग कमरे के अभाव में दम तोडती दिखाई देती हैं । मध्यवर्गीय व्यक्ति का स्वाभाविक उल्लास भी हताश में बदल जाता है क्योंकि उसके सामने क्रूर सत्य अट्टहास करता है जो निर्ममता से उसके जीवन सत्यों का मजाक उडाता है -- " बीवी को रखेंगे कहाँ ? बीस हजार से कम पगडी नहीं पचास हजार से कम ओनरशिप का फ्लैट नहीं । किराये से कोई मकान देता नहीं ।"[२४] एक और उद्धरण देखिए " हमारा बच्चा माँ के अभाव में नहीं चार दीवारों और एक छत के अभाव में कमी अस्तित्व में नहीं आएगा ।" [२५]

(११) अर्थ अग्नि से झुलसा मध्यवर्गीय समाज --

यह आर्थिक वैषम्य ही आधुनिक मध्यवर्गीय चेतना की प्रकृति निर्मित करता है। प्रदर्शन - प्रवृत्ति की उत्कट भावना,उस पर निरन्तर बढती जा रही महँगाई ने प्रमुख रूप से मध्यवर्गीय परिवारोंमें आर्थिक विषमता के संकट को उत्पन्न करने में एक खास रोल अदा किया है । इस आर्थिक आग में मध्यवर्ग ही अधिक झुलस रहा है । पाश्चात्य सभ्यता संस्कृति के फल-स्वरूप नवीन सभ्यता,संस्कृति के परिवर्तित जीवनगत मूल्यों ने युवा-वर्ग को फैशनपरस्ती,आडम्बरप्रियता,उच्चवर्ग में सम्मिलित होने की तीव्राकांक्षा एवं नारी की घर-गृहस्थी के कार्यों के प्रति बढती जा रही उदासीनता ने मध्यवर्गीय परिवारों की अर्थव्यवस्था को एक जटिल संघर्षपूर्ण मोड पर ला खडा किया है ।

निरन्तर बढती जा रही महँगाई नौकरी-पेशा व्यक्तियों के लिए द्रोपदी का चीर हो गई है । सामान्य आर्थिक स्थिति वाले परिवार के लिए दिनोंदिन बढती जा रही दैनिक आवश्यक्ताओं की पूर्ति करना असम्भव-सा कार्य हो चला है । एक सामान्य मध्यवर्गीय व्यक्ति की आकांक्षा और भी बलवती होती है । वह जीवन की अनिवार्य मांगों की पूर्ति के पश्चात भी अतिरिक्त सुख के साधन परिवार के लिए जुटाना चाहता है । परिणामस्वरुप अपनी अभावग्रस्त जिन्दगी से तंग आकर वह जीवन की अनिवार्य आवश्यक्ताओं और अतिरिक्त महत्वकांक्षाओं की

---

२४ डॉ.शंकर शेष - घरौन्दा - पृ.१७ ।

२५ वही पृ.१९ ।

पूर्ति के लिए चोरबाजारी का आश्रय लेने को मजबूर हो जाता है । आजादी के बाद यह प्रवृती घटने की अपेक्षा बढी है । समाज में नैतिक और आर्थिक भ्रष्टाचार को दिनोंदिन प्रोत्साहन मिला है । यह प्रवृती निजी व्यवसाय करने वालों में ही नहीं बढी बल्कि सरकारी कर्मचारी भी समाज की इस घातक प्रवृती से इच्छित लाभ उठाने की लगातार कोशिश में रहते हैं । जीवन की इस मार्मिक विडम्बना को सुलझाने का दायित्व उठाने का प्रयत्न करती है नाटक की नायिका' छाया' जो बचत अभियान के अन्तर्गत अपने प्रेमी' सुदीप' की सिगरेट पर,अपनी चाय पर सिनेमा आदि मनोरंजन पर अकुंश लगा देती है । जिससे वे अपने एक छोटे से,प्यारे से, घरौन्दे का स्वप्न पूरा कर सकें । ३२० फुट के एक छोटे-से घरौन्दे के लिए सुदीप और छाया पलपल घुटते,दबते ,बैाने हो जाते हैं । वस्तुत: अपनी छोट-छोटी खुशियों इच्छाओं का अस्वाभाविक रूप से दमन कर वे किस्तों में आत्महत्या की ओर बढ रहे हैं । मध्यवर्गीय समाज की यही विवश नियती है जो अर्थअग्नि से झूलसी पडी है ।अर्थ-कुण्डली उसकी अस्मिता,स्वाभिमान को बंधक बनाए हुए है । उसका गुलाम व्यक्तित्व तरस खाने के लिए है । उसका दर्द विवश है,उसकी पीडा मसधार का घुमाव है । अर्थ ने उसकी कल्पना शक्ति का ध्वंस कर दिया है ।

(१२) <u>अभाव ही व्याधियों का सूत्रधार --</u>

आज अर्थ समाज जीवन के सभी नैतिक,सामाजिक ,मान-मूल्यों को ध्वस्त कर बैठा है । अर्थ आज की जिन्दगी का वह अहम सवाल है जिसके हल को खोजने में मध्यवर्गीय चेतना सबसे अधिक परेशान है । आज प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह धनवान हो अथवा निर्धन,येन-केन प्रकारेण धन संचित करने में ही अपने जीवन की सार्थकता समझाता है । कारण स्पष्ट है कि आज इन्सान की जगह पैसे की कदर है । व्यक्ति की प्रतिष्ठा का मूल्यांकन उसके स्तर उसकी प्रतिष्ठा को देखकर किया जाता है । निम्न,निम्न मध्यवर्गीय तो सदा ही मजाक का केन्द्र रहा है ।

गहनों और माँ की दी हुई चीजों के प्रति सहज आकर्षण में छाया नहीं, आज की मध्यवर्गीय युवती है । मौतिक सुख,समृध्दि से भरे हुए घर की कल्पना और ऊपर से निर्धनता का अभिशाप व्यधियों का सूत्रधार है ।" गरीबी अपने आप में एक बीमारी है... यह किसी अच्छी चीज को पनपने ही नहीं देती । रोटी और

कपडा जुटाने में ही पूरी ताकत चूस लेती है । उन शक्तियों का आभास तक नहीं होने देती जो किसी के भीतर होती हैं।"[२६] निर्धनता जीवन रस को जन्माने वाली बडवाग्नि है । निर्धनता मध्यवर्गीय जीवन की अभिशप्त गान्धारी है,अन्ध गहर में टूटती घुटती गान्धारी ।गरीब को ' घर' तो मयस्सर हो सकता है लेकिन जहाँ प्रेम का साम्राज्य होगा,प्रेम की ही छत होगी,जहाँ कंकरीट के स्थान पर प्रेम की दीवारें किन्तु -" मकान बनने तक बूढे हो जाएँगे हम दोनों... न कभी पचास हजार होगें और न होगा मकान.... ।[२७] नाटक में मध्यवर्ग के उन महानगरीय बाशिदों का अंकन भी है जो दफ्तर में बैठकर अन्य कार्यों के मोहजाल में उलझे कल्पना लोक की सैर करते रहते हैं । वे भविष्य को सुखद बनाने के लिए श्रम के स्थानपर ज्योतिषशास्त्र का सहारा लेते हैं । सुदीप के प्रमोशन की भविष्यवाणी मिश्रा पहले ही करता है लेकिन प्रमोशन का उसे नाममात्र याने केवल सात रुपये सत्ताईस पैसे प्रति माह का फायदा होता है ।

भारतीय नारी के संस्कारों के महत्व को नाटककार अस्वीकार नहीं सका है । एक छोटे से घरौन्दे की मोहक कल्पना को सच करने के लिए ही छाया प्रेमी सुदीप के कहने पर अपने बॉस मोदी से विवाह कर लेती है । लेकिन परिणयोपरान्त उसके भारतीय संस्कार अवचेतन से चेतन में आकर उसे आत्ममंथन को विवश कर देते हैं और वह अभावग्रस्त जीवन जीने को विवश होती है ।

(१३) अर्थ के कारण संस्कृति का अध:पतन --

आज सांस्कृतिक पतन के मूल में है अर्थ - जिसने आज सभी नैतिक ,सामाजिक मूल्यों को ध्वस्त कर दिया है । संस्कृति के अवमूल्य का यह प्रधान कारण बना हुआ है ।अर्थ सच्चे प्रेमियों के पथ को कंटीला बना देता है।अर्थ की इसी गुलामी ने समाज को संवेदना हीन बना दिया है । अर्थायुग की इस आपाधापी में आज सभी मानवीय रिस्ते अर्थ से जाकर जुड गए हैं। अर्थाभाव आज पति-पत्नी,माँ-बेटा,पिता-पुत्र,भाई-भाई,प्रेमी - प्रेमिका आदि सभी आत्मीय संबंधोंपर प्रश्नचिन्ह लगा देता है । इस

---

२६ डॉ.सुरेश गौतम -डॉ.वीणा गौतम - राजपथ से जनपथ नटशिल्पी - शंकर शेष - पृ.१२६ ।

२७ डॉ.शंकर शेष - धरौन्दा - पृ. ।

अर्थ-वैषम्य ने मध्यवर्गीय परिवारों की छाती को क्षत-विक्षत कर दिया है। आधुनिक समाज आज जिस अर्थ व्यवस्था पर संक्रमित हो रहा है वह मध्यवर्ग की नियति परिमार्जित करता है। अर्थ की अक्षमताने मध्यवर्गीय नारी से पता नहीं कितने अपमानजनक और घृणित कार्य करवाये हैं। अर्थाभाव की तप्त मट्ठी, निम्न मध्यवर्गीय, मध्यवर्गीय युवतियों के अहं को राख का ढेर कर देती है। आत्मसम्मान आज अर्थ के सामने लंगडा हो गया है। अर्थ-दंशित होकर सुदीप अपनी प्रेमिका छाया को मोदी के विवाह प्रस्ताव को स्वीकार कर लेने के लिए विवश करता है। बॉस से शादी करते ही सह्योगियों के लिए छाया मैडम हो जाती है। जीवन में अभावों की क्रूरता, संघर्षों की विफलता सुदीप जैसे हसमुख, संघर्ष-पथ-राही की जीवन दृष्टि ही बदल देती है। `प्रेम एक से तथा विवाह किसी और से - में वह कोई पाप नहीं देखता। वह पुरुषार्थ के बदले नपुंसकत्व का परिचय देता है। संघर्ष छोड षड्यन्त्र पर आमादाहोता है। छाया को ब्लैक मेल करता है लेकिन अन्ततः अपने तमाम किया - कलापोंका आकलन करते हुए पुराने संघर्ष के पथ पर चलने का निर्णय करता है। इस तरह अब अर्थ के कारण ही सांस्कृतिक पतन होने लगा है। मूल्य और संस्कृति को आज गिराया जा रहा है।

(१४) अपाहिज ऊर्जस्विता :

छाया को सुदीप से अधिक प्रभावित करता है मोदी। यदि वह चाहता तो छाया से विवाह उसके बिना पूछे भी कर सकता था। वह जानता है -- `डूबते जहाज से तो.. चूहे भी कतराते हैं तब तुमसे ... यह कहना क्रूरता है --- क्रूरता। लेकिन कभी कभी लगता है अगर तुम... शायदजोने की इच्छा।'[२८] उसकी अपाहिजता में भी ऊर्जस्विता है। उसके इस शक्तिशाली ऊर्जस्विता से युक्त रूप से छाया भी महकी है। उसके शब्दों में -- इसीलिए मुझे उस दिन तुम जैसे हट्टे-कट्टे आदमी की तुलना में यह अपाहिज आदमी ज्यादा ताकतवार लगा।'[२९] और अन्त में भी वह जिस पुरूषोचित अधिकार से छाया को घर से बाहर जाने के लिए रोकता

---

२८ डॉ. शंकर शेष - घरौन्दा - पृ.३८।

२९ वही पृ.६७।

है वह उसकी दृढता का प्रतीक है । नाटककारने प्रस्तुत रचना में अपाहिज उर्जस्विता को मोदी के माध्यम से चित्रित किया है ।

(१५) षड्यन्त्र की प्रवृत्ति का चित्रण --

सुदीप का जीवन चरित्र भी संघर्ष के जीवनतारों से बुना गया है । वह स्वभाव से मिष्टभाषी एवं मिलनसार है । आम मध्यवर्गीय की भाँति एक छत और चार दीवारों के घर का स्वप्न उसका भी है । उसे साकार करने के कठिन उतार-चढावों में हम उसके व्यक्तित्व में राम-रावण दोनों का रूप देखते हैं । पहला रूप उसके प्रेम,त्याग और अपनी छोटी-छोटी इच्छाओं को मारने वाला है । वह अपने निश्चय पर इतना दृढ है कि अपने लक्ष्य तक पहुँचाने वाली पगडण्डी को बिल्डर के छीन जाने और गुहा के आत्महत्या कर लेने पर भी वह विचलित नहीं होता । आत्मबल इकट्ठा कर वह दोगुने उत्साहसे नए मार्ग की तलाश में कंकरीली, पथरीली जमीन से काँटे बुहारने लगता है ।इस बार मार्ग में खंदक खोदता है प्राणप्रिय छाया का भाई और रही सही कसर मकान मालिक उसके उधार के पैसे आठ हजार रुपये लडकी को दहेज में देकर पूरी कर देता है --" मैं तो कही का नहीं रहा,छाया ।"[30] इन शब्दों से उसकी निराशा प्रकट होती है । बार-बार आनेवाले छत प्रत्याघात से उसका साहस ही टूट जाता है । तब वह उस मध्यवर्गीय नैतिक बोझ से हटकर सोचने लगता है कि इस दुनिया में सपने ईमानदारी और भावुकता से नहीं बल्कि बेईमानी एवं षड्यन्त्र से ही सफल होते हैं । उनके सुमार्ग बन्द हो जाते हैं, गहन हताशा की प्रतिक्रिया होती है और अन्धकारपूर्ण मार्ग की तलाश । और यही से वह रास्ता शुरु होता है जिसे बेईमानी का रास्ता कहते हैं -- षड्यन्त्र का रास्ता.. हर आदमी अपने स्वार्थ के लिए,दूसरे के खिलाफ षड्यन्त्र रचा करता है ... चुपचाप ।"[31] यही से उसकी जीवन धारा का रुख मुड जाता है शार्ट कट षड्यन्त्र और हत्या की ओर इसी बीच कर्म के धनी मि.मोदी छाया के सामने शादी का प्रस्ताव रखते हैं । यातनाओं से बाज आया

---

३० डॉ.शंकर शेष - घरौन्दा - पृ.४६ ।

३१ वही पृ.४७ ।

सुदीप छाया को प्रस्ताव मानने के लिए बाध्य करता है । वह सोचता है कि समाज का शोसक धनी वर्ग जब हमारे घरौन्दे को ढहा देता है,तो हम भी उनके घरौन्दों को ढहा देंगे । प्रतिशोध की धून में मस्त सुदीप शोषक को उसके ही घर में उसके ही हाथ से मारने का षड्यन्त्र बनाता है ।' हमारा षड्यन्त्र दुश्यन को उसके ही घर में ,उसके ही हत्थार से मारना है ।"[३२] उसकी जीवन दृष्टि को पूर्ण ग्रहण लग जाता है । भावनाएँ,नैतिक्ता,आदर्श,ईमानदारी आदि भाव अग्निशलाका बनकर उसके हृदय,मन,आत्मा की इकाई को विक्षिप्त कर देते हैं और वह कहता है --" भावना को ताक पर रखकर,संस्कारोंका बोझ उतार कर और नैतिक्ता के माथे पर लात मार कर हमें हर काम सावधानी से करना है ।" [३३] आपदाओं के झंझाओं को बॉस की भाँति लचीला बन झेलने वाला सुदीप बन जाता है स्वार्थी अवसरवादी । सुदीप अन्धकार में उल्लू की नजरों से देखने लगता है । पाठक-प्रेक्षाक को उससे सहानुभूति होती है तो दूसरे क्षण उसके हृदय में उसके आचरण-व्यवहार के प्रति वितृष्णा जागने लगती है । अन्तत: उसके हिस्से में आती है संवेदना वह छाया को पत्र लिखकर अपने समस्त पापों का प्रायश्चित करता है । प्रायश्चित पाप दृष्टि को गंगोत्री बना देता है और वह उस अग्नि में तपकर - दमकता पुन: जीवन की जिजीविषी धुरी से जुड जाता है ।वह कहता है --" मुझे समझमें आ रहा है कि जिन प्रश्नोंपर आमने सामने आकर लडाई करना जरूरी है, जिनके फैसले सडकों पर किए जाने चाहिए उन्हें व्यक्तिगत साजिशों से नहीं सुलझाया जा सक्ता.... मैं कायरों की तरह ...नहीं जा रहा हूँ... मैं लडूंगा... संघर्ष का राजपथ अपनाकर ।" [३४]

डॉ.शंकर शेष जी ने घरौन्दा नाटक में नायक सुदीप को षड्यन्त्रकारी पात्र के रूप में चित्रित किया है और उसे बाद में पश्चाताप की आग में झुलसाया भी है । इससे शेष जी समाज में जो षड्यन्त्र का रोग फैला हुआ है उसके प्रति इन्सान को सचेत करते हुए उससे बचाने का संदेशा देते हैं ।

---

३२ डॉ.शंकर शेष - घरौन्दा - पृ.५७ ।

३३ वही पृ.५७ ।

३४ वही पृ.८७ ।

निष्कर्ष --

डॉ.शंकर शेष जी ने `घरौन्दा` नाटक में कई समस्याओं को चित्रित किया है । ये समस्याएँ समाज को खोखला बनाती हैं । इस नाटक में उन्होंने अर्थतन्त्र में जकडे नियतिवाद के दर्शन कराने के साथ साथ अर्थ की अग्नि में झुलसे मध्यवर्गीय समाज का चित्रण किया है । अर्थ की समस्या के कारण संस्कृतिका अध:पतन हो रहा है ।अर्थ का अभाव ही व्याधियों का सुत्रधार है । इसमें प्रेम और संघर्ष का चित्रण भी रहा है । छाया से मोदी जैसे दिल के मरीज याने अपाहिज को भी ऊर्जास्विता प्रदान की है तो सुदीप जैसा युवक अच्छा होते हुए भी वह नपुंसक निर्णय के कारण अपाहिज बना है । मध्यवर्गीय नैतिकता की समस्या का चित्रण करते हुए लेखक इसमें भारतीय स्त्री के संस्कारों का महत्व बताता है । समाज में स्वार्थ की सिध्दि के लिए जो लोग षड्यन्त्रकारी कार्य करते हैं उसका चित्रण सुदीप के रूप में कराया है । कुलमिलाकर वर्तमान समाज में जो समस्याएँ है उनका तथा खास तौरपर घर की जो समस्या है उसका चित्रण ही ` घरौन्दा ` नाटक का प्रमुख कथ्य है ।